सिक्ख दर्शन के अनुसार शिक्षा के लक्ष्य एवं उद्देश्य

पारुल चौधरी*
लालजी त्रिपाठी**

शिक्षा मनुष्य के विकास का साधन होती है, इस बात को सभी धर्मों में स्वीकार किया गया है, सिक्ख धर्म, जोकि सभी धर्मों में सबसे नवीन धर्म है, में भी शिक्षा को सामाजिक परिवर्तन का वाहक माना गया है। सिक्ख धर्म में हुए सभी दस गुरुओं की वाणियाँ धार्मिक एवं नैतिक शिक्षा से भरी हैं। जिसके आधार पर वर्तमान शिक्षा के लक्ष्य एवं उद्देश्य निर्धारित किए जा सकते हैं। उन्होंने व्यक्ति के आत्मज्ञान एवं आत्म-प्रकटीकरण के लिए शिक्षा को आवश्यक माना है। उन्होंने मात्र किताबों के अध्ययन को शिक्षा नहीं माना है। वह उसे सच्ची शिक्षा मानते हैं जो व्यक्ति को सही और गलत का भेद करने में सक्षम बनाती है और इस तरह की शिक्षा एक अच्छा शिक्षक ही प्रदान कर सकता है। सिक्ख गुरुओं के अनुसार, शिक्षा व्यक्ति के व्यक्तित्व का विकास कर उसमें दैवीय गुणों को जाग्रत करती है और उसे ब्रह्मज्ञानी बनाती है। जीवन में नैतिक मूल्यों के लिए उन्होंने सांस्कृतिक, भावनात्मक एवं सौंदर्यात्मक विकास को भी आवश्यक माना है। साथ ही व्यक्ति की शिक्षा में शारीरिक शिक्षा को भी स्थान दिया है। सामाजिक विकास के लिए उन्होंने लोगों की सेवा, सामाजिक संवेदनशीलता तथा आपसी सहयोग एवं संतोष को बढ़ावा देना, शिक्षा के उद्देश्य निर्धारित किए। सिक्ख गुरुओं ने सामाजिक उत्पीड़न को रोकने के लिए नागरिकता की शिक्षा एवं महिलाओं को समाज में सम्मानजनक स्थान दिलाने के लिए, उनकी शिक्षा को आवश्यक माना है। सिक्ख धर्म एक क्रिया प्रधान धर्म है जो सन्यासी जीवन जीने के पक्ष में नहीं है, बल्कि यह श्रम पूर्ण जीवन अपनाने का पक्षधर है।

* *शोध छात्रा*, शिक्षा विभाग, दीनदयाल उपाध्याय, गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर
** *आचार्य एवं अध्यक्ष*, शिक्षा विभाग, दीनदयाल उपाध्याय, गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर

Chapter 3.indd 30 03-08-2017 12:53:58

प्रस्तावना

मनुष्य का धर्म उसके दृष्टिकोण, शिक्षा एवं जीवन का आधार होता है। हर धर्म का मुख्य उद्देश्य होता है मानव जीवन को उन सदाचारी व दैवीय गुणों का धारक बनाना जिनको अपनाकर वह अपने जीवन मार्ग को उच्च, पवित्र एवं अच्छा बना सके। धर्म मनुष्य को न केवल जीवन जीना सिखाता है, बल्कि उसकी सांसारिक समस्याओं का आध्यात्मिक समाधान भी प्रस्तुत करता है। वैसे तो संसार में बहुत-से धर्म हुए हैं, लेकिन उन सभी में सिक्ख धर्म सबसे नवीन धर्म है, जिसकी नींव पन्द्रहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में गुरु नानक देव द्वारा रखी गई थी। सिक्ख धर्म में व्यक्ति गुरु की परंपरा सन् 1469 में गुरु नानक देव के जन्म से शुरू होकर गुरु गोविन्द सिंह तक अनवरत रूप से जारी रही। सन् 1708 में गुरु गोविन्द सिंह ने ग्रंथ साहिब को स्थायी गुरु की पदवी प्रदान की और व्यक्ति गुरु की दो-सौ उन्तालीस वर्ष पुरानी परंपरा को समाप्त कर दिया। वास्तव में, दस गुरुओं में प्रकट एक 'नानक ज्योति' ने शब्द गुरु के महासागर श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी में प्रकट किए गए अपने ईश्वरीय उपदेशों के माध्यम से मानव जीवन को सुखमयी बनाने का संदेश दिया है।

अब सिक्ख दस गुरुओं और उनकी जागती ज्योति 'गुरु ग्रंथ साहिब' के अलावा अन्य किसी देहधारी व्यक्ति को 'गुरु' नहीं मानता। सिक्ख धर्म और उसके अनुयायी प्रत्येक सिक्ख के जीवन में 'गुरु' का सर्वोच्च स्थान है, जिसे वह सतगुरु के साथ संबोधित करता है। देहधारी गुरुओं के बाद अब 'गुरु ग्रंथ साहिब' ही सिक्खों के वास्तविक गुरु हैं। इसमें दर्ज सिक्ख गुरुओं की वाणियों की रचना विभिन्न गुरुओं ने स्वयं की है। इसमें सिक्ख गुरुओं के अलावा हिन्दू, मुस्लिम एवं तथाकथित निम्न जातियों से संबंध रखने वाले 30 संतो और भक्तों की चुनिंदा वाणियों को भी दर्ज किया गया है। यह विश्व का एकमात्र धर्म ग्रंथ है, जिसमें उसके छह मूल धर्म गुरुओं सहित 36 रचनाकारों की वाणी दर्ज की गई है, जिनमें शेख फ़रीद, जयदेव, कबीर, नामदेव, त्रिलोचन, परमानंद, रामानंद, रविदास, धन्ना आदि संतों भक्तों के नाम प्रमुख हैं।

सिक्ख गुरुओं ने मानव जीवन की विभिन्न समस्याओं पर बहु-विस्तृत विचार प्रस्तुत किए हैं। यद्यपि धर्म, दर्शन, मानवीय शिक्षा, सामाजिक एवं राजनीतिक व्यवस्था, राष्ट्रीय सम्मान और विश्वास, ये सभी मुद्दे इनके विचार क्षेत्र के विषय रहे हैं।, तथापि, शिक्षा पर इनके विचार विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं, क्योंकि इसने सामाजिक परिवर्तन का कार्य किया था। यह परिवर्तन गुरुओं के विचारों द्वारा उत्पन्न शैक्षिक आन्दोलन का परिणाम था। गुरु नानक द्वारा शुरू किए गए इस शैक्षिक आन्दोलन को बाद के गुरुओं ने भी जारी रखा। सिक्ख गुरुओं ने न केवल शिक्षा पर अपने विचार व्यक्त किए, बल्कि इस दिशा में कुछ व्यावहारिक कार्य भी किए। इन्होंने लड़के और लड़कियों की प्रारंभिक शिक्षा के लिए सिक्ख मंदिरों के पास स्कूल खोलने का आदेश भी दिया था। ''इन विद्यालयों की तीन प्रमुख विशेषताएँ थी। प्रथम, इन विद्यालयों में धार्मिक और नैतिक दोनों ही तरह की शिक्षा दी जाती थी। द्वितीय, शिक्षा का माध्यम मातृभाषा रखा गया था यद्यपि वह अभी पूरी तरह

विकसित नहीं हुई थी। तीसरा, लोगों के मस्तिष्क को प्रबुद्ध करने के लिए दो तरीके अपनाए गए, वयस्को के लिए उपदेश और वाद-विवाद तथा बच्चों को शैशवास्था से प्रशिक्षण देना।[1] इस तरह की शिक्षा का मुख्य उद्देश्य प्रारंभिक शिक्षा को सर्व-साधारण के लिए सुगम्य बनाना था। गुरु गोविन्द सिंह ने अपने समय की आवश्यकताओं को देखते हुए सैनिक प्रशिक्षण को भी शिक्षा में स्थान दिया। उस समय अमृतसर, आनन्दपुर तथा दमदमा साहिब को शिक्षा का केंद्र बनाया गया। सिक्ख गुरुओं द्वारा दी गई शिक्षा न केवल तत्कालीन परिस्थितियों में प्रासंगिक थी, बल्कि वर्तमान शिक्षा के क्षेत्र में भी उपयोगी है। इनके विचार अपने समय के शिक्षाशास्त्रियों से बहुत आगे थे, साथ ही भारतीय परंपराओं के अनुकूल भी थे।

भारतीय परंपरा के अनुसार, व्यक्ति की आध्यात्मिक चेतना को जाग्रत करना मानव जीवन का ध्येय रहा है और शिक्षा को इस ध्येय की प्राप्ति का साधन माना गया है। सिक्ख गुरुओं ने भी इस तरह के विचार व्यक्त किए हैं और कहा है कि शिक्षा व्यक्ति को उसकी आत्मशक्ति से परिचित कराती है। यह व्यक्ति के आत्मज्ञान एवं आत्म-प्रकटीकरण में सहायक होती है। उनके अनुसार, वही व्यक्ति वास्तविक रूप से शिक्षित है जो स्वयं को पहचानता है, क्योंकि सच्ची शिक्षा व्यक्ति को ईश्वर का साक्षात्कार कराती है और उसके मस्तिष्क को दैवीय ज्ञान से प्रकाशित करती है और स्वयं से परिचित कराती है।

"नानक सो पड़िआ सो पंडितु बीना,
जिसु राम नामु गलि हारू ॥" [2]

गुरु नानक ऐसी शिक्षा का समर्थन करते हैं जो व्यक्ति को उसके पाशविक अस्तित्व से बाहर निकाल कर उसके आध्यात्मिक स्वरूप को जाग्रत कर सके और उसके चरित्र का निर्माण कर सके। ऐसी शिक्षा मात्र किताबों के अध्ययन से प्राप्त नहीं हो सकती है, इसलिए सिक्ख गुरुओं ने शिक्षा को किताबों के अध्ययन से भिन्न माना है। वे शिक्षा को मात्र सूचना एकत्र करना नहीं मानते हैं। वह ज्ञान जो मात्र किताबों के अध्ययन से प्राप्त होता है, बिना बोध और अनुभूति के, वह बेकार है। यह केवल दिमाग पर एक बोझ होता है।

"लेख असंख लिखि लिखि मानु ॥
मनि मनिऐ सचु सुरति वरवानु ॥
बदनी पड़ि पड़ि भारू॥
लेख असंख अलेखु अपारू" [3]

सिक्ख गुरुओं ने विद्वान और ज्ञानी व्यक्ति में भेद किया है। उनका कहना है कि वह विद्वान मूर्ख के ही समान है जो लोभ, लालच और घमंड का शिकार है। 'गुरुबानी' में ज्ञानी और विद्वान का भेद स्पष्ट करने के लिए रावण का उदाहरण दिया गया है। वह महान पंडित और शास्त्रों का ज्ञाता था, लेकिन फिर भी वह अपने ऊपर नियंत्रण न रख सका। गुरु ने कहा है कि सच्चा ज्ञानी व्यक्ति वह है जो विवेक विचार का सही उपयोग करना जानता है तथा उसके आधार पर सही और गलत का विभेद करने में सक्षम होता है।"[4] आधुनिक शिक्षाशास्त्री शिक्षा को जन्मजात शक्ति के विकास के रूप में देखते हैं। वह मनुष्य को असीम ऊर्जा और क्षमता का स्रोत मानते हैं। गुरु का भी विश्वास है कि व्यक्ति को असीम शक्ति का वरदान प्राप्त है। शिक्षा वह प्रक्रिया है जिसके

द्वारा गुरु इस आंतरिक शक्ति को बाहर लाता है। ''मनुष्य के आत्मनिर्माण की खान में बहुत से योग्य रत्न विकास की प्रतीक्षा कर रहे हैं, लेकिन ज्ञान के ये अनमोल मोती गुरु के सहयोग से ही खोजे जा सकते हैं।''[5] अत: गुरु का विश्वास है कि एक अच्छा शिक्षक ही शिक्षा द्वारा बालक की निहित क्षमताओं का विकास कर सकता है। यह उसकी शिक्षा को द्विध्रुवीय बना देता है। वैदिक काल से ही भारतीयों के लिए शिक्षा उस प्रकाश स्रोत की तरह रही है जो उसे जीवन के विभिन्न कार्यों को समझने और इन्हें विद्वतापूर्ण तरीके से करने की शक्ति प्रदान करती है। सिक्ख गुरुओं ने शिक्षा को बौद्धिक ऊर्जा कहा है जो व्यक्ति के मस्तिष्क को अज्ञान रूपी गुलामी के बंधनों से मुक्ति प्रदान करती है। गुरु ने शिक्षा को वह शक्ति कहा है जो व्यक्ति के भौतिक, मानसिक, संवेगात्मक, सामाजिक, नैतिक और आध्यात्मिक विकास को प्रभावित करती है।

'जपुजी' में गुरु नानक ने व्यक्ति के मानसिक व आध्यात्मिक विकास की जो पाँच शैक्षिक अवस्थाएँ बताई हैं वो व्यक्ति में वैज्ञानिक नज़रिये, कलात्मक दृष्टिकोण, सृजनात्मक अभिवृत्ति, नैतिक और आध्यात्मिक क्षमता तथा दैवीय सत्य का ज्ञान कराती हैं।

ये अवस्थाएँ दर्शाती हैं कि शिक्षा ज्ञान, बुद्धि, सत्य तथा ईश्वर के दृष्टिकोण और अस्तित्व का वास्तविक प्रकटीकरण है। अतः गुरु शिक्षा को प्रकाश और शक्ति का स्रोत मानता है, जो व्यक्ति की भौतिक, मानसिक, बौद्धिक और आध्यात्मिक शक्तियों का प्रगतिशील और संगत विकास करता है, जिससे वह समाज का संवेदनशील और उपयोगी सदस्य बन सके। इस प्रकार शिक्षा व्यक्ति को पूर्ण जीवन योग्य बनाती है। मानव जीवन के ये सभी आदर्श शिक्षा के लक्ष्य और उद्देश्यों में प्रदर्शित होते हैं।

सिक्ख गुरुओं के द्वारा शिक्षा के निम्न लक्ष्य बताए गए हैं —

1. व्यक्तिगत विकास

गुरु शिक्षा के द्वारा व्यक्ति को मुक्ति (मोक्ष), जुगती (जीवन की कला), तृप्ति (आत्मसंतोष) और भुक्ति (जीवन का आनंद) के लिए तैयार करना चाहता है। वह चाहता है कि मानव संसार में सुखी जीवन व्यतीत करे और इस संसार के बाद भी स्वर्गीय आनन्द को प्राप्त करे। गुरु के अनुसार, मानवीय जीवन बहुत महत्वपूर्ण है और एक व्यक्ति अपना सर्वोत्तम विकास करके ही इसका सदुपयोग कर सकता है। वह शिक्षा के द्वारा मानव व्यक्तित्व के बहुत-से पक्षों का विकास करना चाहता है। आदर्शवाद का विश्वास है कि मानव में दैवीय तेज होता है और शिक्षा का उद्देश्य मानव के इस दैवीय गुण को जाग्रत करना है। सिक्ख गुरु भी आदर्शवाद के इन विचारों में विश्वास करते हैं। वह शिक्षा शब्द का उपयोग मानव की आध्यात्मिक जागृति के लिए करते हैं। उनके लिए वास्तविक शिक्षा वो है जो व्यक्ति को आत्म अनुभूति या ईश्वर अनुभूति कराए। "गुरु गोविन्द सिंह ने व्यक्ति को आत्म बुद्धि से निर्देशित होने को कहा है। वह आशा करते हैं वास्तविक शिक्षित व्यक्ति से कि वह खुद को ईश्वर के चरणों में अर्पित कर दे।"[6]

गुरु, आध्यात्मिक रूप से प्रबुद्ध (शिक्षित) व्यक्ति के गुणों का विस्तृत वर्णन करता है और उसे ब्रह्मज्ञानी या गुरुमुख नाम से पुकारता है। गुरु अर्जुन देव ने 'सुखमनी' में ब्रह्मज्ञानी के चरित्र, व्यक्तित्व व आध्यात्मिक शक्ति का वर्णन किया है। उसके अनुसार, "ब्रह्मज्ञानी वह है जिसने ईश्वर का पूर्ण ज्ञान और अनुभव प्राप्त कर लिया है। वह ईश्वरीय ज्ञान से प्रकाशित आत्मा है जो हमेशा उच्च आध्यात्मिक अवस्था में रहती है। दैवीय ज्ञान से उसका पोषण होता है। वह विश्व में कमल की तरह रहता है। उसके कार्य दैवीय होते हैं। उसके जीवन में शांति और संतोष रहता है।"[7] गुरु का कहना है कि ज्ञान अज्ञानता को दूर करता है, मन को प्रकाशित करता है तथा व्यक्ति को सत्य देखने योग्य बनाता है और ऐसा ज्ञान शिक्षा द्वारा प्राप्त करना ही संभव है। गुरु ने व्यक्ति के व्यक्तित्व के विकास के लिए उसकी बौद्धिक क्षमताओं के विकास को आवश्यक माना है। शिक्षा व्यक्ति को बौद्धिक पोषण उपलब्ध कराती है। शिक्षा द्वारा व्यक्ति की बुद्धि की जड़ता को समाप्त कर उसमें निरंतर ज्ञान प्राप्त करने की जिज्ञासा और सतर्कता उत्पन्न की जा सकती है, जो उसके बौद्धिक विकास के लिए आवश्यक होती है। "गुरु अपने शिष्यों के मन को अज्ञानता और अंधविश्वास से मुक्त करना चाहता है, जिसके लिए वह ज्ञान के अधिग्रहण द्वारा बौद्धिक विकास पर बल देता है।"[8] गुरु का कहना है कि मन और आत्मा की जागृति के लिए ज्ञान अत्यावश्यक है। अविद्या मन को बेड़ियों में बाँधती है और विद्या ज्ञान के प्रकाश से मन को प्रकाशित करती है। "दीपक के जलने से जैसे अंधेरा दूर हो जाता है, वेदों के पाठ से पाप मिट जाता है, जैसे सूर्य के निकलने पर चाँद गायब हो जाता है, उसी तरह ज्ञान की प्राप्ति पर अज्ञान गायब हो जाता है।"[9] उसी तरह ज्ञान रूपी पुस्तक के अध्ययन से मन का अज्ञान दूर हो जाता है, मन साफ़ हो जाता है और फिर कभी गंदा नहीं होता है। ज्ञान के द्वारा मनुष्य अच्छे और बुरे में भेद करने योग्य बन जाता है और सद्‌गुण के रास्ते को अपनाता है। "वह बुद्धि की तलवार मन की बुराइयों के विरूद्ध लड़ने में सक्षम हो जाता है।"[10] गुरु ऐसा महान नैतिक शिक्षक होता है जिसके लिए सत्य तो महान होता ही है, लेकिन सत्यवादी जीवन उससे भी ज़्यादा महान होता है। गुरु का कहना है कि सच्ची शिक्षा हमारे नैतिक तंतुओं को क्षमता प्रदान करती है और हमें भावावेश और पूर्वाग्रह में आकर कार्य करने से रोकती है। उसके अनुसार, "वह व्यक्ति विद्वान होता है जो अपने जीवन में उच्च नैतिक मूल्यों को स्थापित करने का प्रयास करता है।"[11] ''एक व्यक्ति अपने जीवन में ढेर सारी किताबें पढ़ सकता है और बहुत सी उपाधियाँ प्राप्त कर सकता है, लेकिन वह शिक्षित व्यक्ति नहीं माना जायेगा यदि उसमें स्वार्थ, लालच और घमंड विद्यमान है।"[12] 'जपुजी' में गुरुनानक ने बताया है कि कैसे एक व्यक्ति का व्यक्तित्व नैतिक अनुसरण के द्वारा विकसित होता है। इस तरह का नैतिक अनुशासन और नैतिक ज्ञान शिक्षा द्वारा ही प्राप्त होता है। गुरु शिक्षा के लिए और भावनाओं की समृद्धि के लिए जागरूक रहता है। वह सांस्कृतिक, भावनात्मक एवं सौंदर्यात्मक विकास के लिए संगीत और साहित्य के परंपरागत अध्ययन पर बल देता है। वह गीतों द्वारा ईश्वर की प्रार्थना करने पर बल देता है

और इसे ही सिक्ख धर्म की आत्मा मानता है। ईश्वर प्रार्थना को गाने की परंपरा गुरुद्वारे में पुराने समय से चली आ रही है और अभी भी जारी है। अधिकांश गुरु कवि थे, इसलिए उनके गीत भी लयबद्ध होते थे। इनके गीतों में काव्यात्मक मनोहरता, गीतात्मक सौंदर्यता और महाकाव्य की उदात्ता होती थी। गुरु कवियों को अपने साथी के रूप में अपने साथ ही रखते थे। मर्दाना गुरु नानक के साथ जीवनपर्यंत रहा। इसी तरह सत्ता और बलवंदा ने मर्दाना की परंपरा को आगे बढ़ाया और खादुर गाँव में गुरु के पवित्र संगीत को फ़ैलाया। गुरु गोविंद सिंह ने पुरातन साहित्य के अनुवाद द्वारा अपने शिष्यों को सौंदर्यात्मक और परंपरागत प्रशिक्षण दिया था।

भावनात्मक प्रशिक्षण और सौंदर्यात्मक विकास के लिए गुरु ने अपने अनुयायियों की शिक्षा में संगीत को स्थान देने पर विशेष बल दिया। संगीत न केवल साहित्यिक और सौंदर्यात्मक तत्वों द्वारा आनंद प्रदान करता है, बल्कि यह साधारण लोगों के दिलों में देश के आदर्शों और परंपराओं को संजोए रखने का भी कार्य करता है। गुरु अपने शिष्यों को ईश्वरीय मंत्रो द्वारा आनंद प्राप्त करने की सलाह देता है। गुरु हर गोविन्द अमृतसर में लोगों का मनोरंजन करने और उन्हें निर्देशित करने के लिए इस तरह के संगीत समारोह का आयोजन करते थे।

गुरु गोविन्द सिंह ने व्यक्ति की शिक्षा में उसकी शारीरिक शिक्षा को भी स्थान दिया है। उनके अनुसार, "खेल और संगीत न केवल मन को बहलाते हैं बल्कि शारीरिक स्वास्थ्य के महत्व और श्रम की गरिमा को भी बताते हैं।" गुरु नानक ने तो स्वयं करतारपुर में कई साल किसान की तरह जीवन बिताया। वह सामाजिक सक्रियता और हाथ से श्रम को आध्यात्मिक आनंद का साधन मानते थे। उनके द्वारा अंगद को अपने उत्तराधिकारी के रूप में चुनने का भी मुख्य कारण यही था कि उन्हें शारीरिक श्रम करने में संकोच नहीं होता था। नानक वाणी सिद्ध गोष्ठी में गुरु नानक ने सिद्धों को मोक्ष प्राप्ति के लिए शरीर को भूखा रखने और प्रताड़ित करने की भर्त्सना की है और कहा है कि चूँकि शरीर आत्मा का वाहन है, इसलिए इसे स्वस्थ, मज़बूत और निर्विकार रखना चाहिए। अपने समय की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए गुरु अंगद देव ने बालकों के शारीरिक विकास तथा युद्ध संबंधी कौशलों के विकास पर बल दिया था। इसके लिए उन्होंने 'माल-अखाड़' नाम से स्कूल भी खोला था, जहाँ वह अपने शिष्यों के शारीरिक विकास के लिए कुश्ती का आयोजन करते थे और स्वयं भी इन आयोजनों में भाग लिया करते थे।

गुरु अर्जुन देव भी अपने शिष्यों के शारीरिक विकास पर पूरा ध्यान देते थे। गुरु हर गोविन्द हथियारों के संचालन में बहुत कुशल थे और सैन्य अभ्यास, जैसे — तलवारबाज़ी, तीरंदाज़ी और बंदूक चलाने की कला का अभ्यास भी करते थे, साथ ही अपने शिष्यों में भी इन क्रियाओं के विकास को प्रोत्साहित करते थे। गुरु गोविन्द सिंह ने खेलों के शैक्षिक, सामाजिक और सैनिक महत्व को ध्यान में रखते हुए अपने शिष्यों को शिकार, घुड़सवारी, कबड्डी, निशानेबाज़ी, कुश्ती आदि जैसे खेलों में भाग लेने के लिए प्रोत्साहित किया। वह खुद भी इस तरह के खेलों के शौकीन थे और अपने शिष्यों के साथ इन खेलों में बढ़-चढ़ कर हिस्सा लेते थे।

2. सामाजिक विकास

सभी गुरु मानवतावादी थे। लोगों की भलाई उन्हें सबसे प्यारी थी। चूँकि वो मानव सेवा में विश्वास करते थे, इसलिए उन्होंने शिक्षा का उद्देश्य लोगों की सेवा, सामाजिक संवेदनशीलता तथा आपसी सहयोग और संतोष को बढ़ावा देना निर्धारित किया था। गुरु नानक ने जीवन में सेवा के स्थान के बारे में कहा है कि, "हम ईश्वर के न्यायालय में तभी सम्मानपूर्ण स्थान प्राप्त कर सकते हैं जब हम निःस्वार्थ भाव से संसार की सेवा करेंगे, और तभी हम जीवन में यश, सौंदर्य और आनन्द भी प्राप्त करेंगे।"[13] गुरु ने मानव सेवा को ही ईश्वर की सेवा कहा है। धर्म और शिक्षा व्यक्ति को प्रेरित करते हैं कि वो अपने जीवन और प्रतिभा को मानवता की सेवा के लिए समर्पित कर दें।

आज हम समाज सेवा को शिक्षा का अनिवार्य भाग बनाने पर विचार कर रहे हैं और इसके लिए एन.सी.सी. और युवा कल्याण जैसे कार्यक्रम आयोजित किए जा रहे हैं, जबकि गुरु नानक ने इसे काफ़ी पहले ही शिक्षा का उद्देश्य बताया था। उनके अनुसार, वास्तविक शिक्षित व्यक्ति वह है जो व्यक्तिवादी और अहंकारी नहीं है, जो सभी में भगवान को देखता है और सभी की उन्नति के लिए कार्य करता है। ''गुरु मनुष्य और ईश्वर के बीच पितृभाव तथा मानव और मानव के बीच मातृभाव के विकास का समर्थन करता है। अपने इस आदर्श को पूरा करने के लिए उसने संगत और पंगत जैसे सामाजिक समारोह के आयोजन की शुरुआत की। इस तरह के समारोह में भाग लेने से व्यक्ति में समाज सेवा, भातृत्व, सहयोग और आत्म बलिदान जैसे गुणों का विकास होता है।"[14] गुरुद्वारे में लंगर वाले स्थान पर ऊँच-नीच, जात-पात, अमीर-गरीब का भेदभाव किए बिना सभी व्यक्तियों द्वारा फ़र्श पर एक ही पंक्ति में बैठकर भोजन करने से आपसी प्रेम और ईश्वर के प्रति श्रद्धा भाव का विकास होता है। गुरु अपने शिष्यों को नागरिकता की शिक्षा और प्रजातांत्रिक तरीके से जीवन जीने की शिक्षा देता है। गुरु गोविन्द सिंह ने जिन पाँच शिष्यों को अमृत दीक्षा दी, वो सभी अलग-अलग जाति के थे, लेकिन उन्होंने सबको एक ही पात्र से अमृत पिलाया और स्वयं भी एक विनम्र शिष्य की तरह अमृत की दीक्षा ली। अपने ही शिष्यों से अमृत की दीक्षा लेकर उन्होंने गुरु और शिष्य के बीच का सदियों पुराना अंतर मिटा दिया और यह बताया कि उनके लिए अछूत और निम्न समझे जाने वाले लोग भी गुरु के समान ही पूज्य और सम्मान के अधिकारी हैं। इस प्रकार, इन्होंने यह संदेश दिया कि भातृत्व की भावना और आपसी सौहार्द ही वास्तविक रूप में शिक्षित व्यक्ति की पहचान है। अतः शिक्षा का सामाजिक उद्देश्य न केवल स्वयं के मस्तिष्क को ज्ञान द्वारा भरना है, बल्कि मानव और मानव के बीच प्रेम और भाईचारे के बंधन को स्थापित करना भी है। गुरु सभी तरह के सामाजिक उत्पीड़न के खिलाफ़ थे। उन्होंने दमित-शोषित और महिलाओं के उत्थान के लिए हमेशा कार्य किया। गुरु नानक ने तो 'नानक उत्तम नीच न कोई' (कोई भी व्यक्ति जन्म से महान या नीच नहीं होता, बल्कि अपने कर्मों से होता है) कहकर छोटे-बड़े, ऊँच-नीच, राजा-रंक का भेद ही मिटा दिया। उन्होंने पूंजीपति, सामंत, मलिक भागो के आतिथ्य को ठुकराकर एक दलित बढ़ई भाई

लालों का आतिथ्य स्वीकार किया और लोगों को मेहनत और ईमानदारी से जीवन जीने की सलाह दी। वह महिलाओं को भी समाज में सम्मानजनक स्तर दिलाना चाहते थे। निःसंदेह उन्होंने अपने समय से आगे बढ़कर महिलाओं की सामाजिक समानता की पैरवी की और महिलाओं को पुरुषों का गुलाम बनाने की बजाय उसका सहयोगी मानना सिक्ख समुदाय का मुख्य लक्षण बना दिया। तात्कालिक मुस्लिम समाज में जहाँ महिलाओं पर बहुत सारी पाबंदियाँ लगाई गई थीं, वहाँ गुरु नानक का यह विचार नारी स्वतंत्रता की दिशा में प्रथम प्रयास था। इस प्रकार गुरुओं की शिक्षा का उद्देश्य एक नयी और बेहतर सामाजिक व्यवस्था का निर्माण करना था।

3. क्रियापूर्ण जीवन और श्रम के लिए तैयारी

गुरु क्रियापूर्ण जीवन में विश्वास करते हैं। उनका कहना था कि एक व्यक्ति अपने प्रयासों से अपने भाग्य को बदल सकता है। वो गीता के कर्मयोग के दर्शन को मानते थे। उनका कहना था कि मोक्ष प्राप्ति के लिए व्यक्ति को कर्मयोगी होना चाहिए। कर्मयोगी व्यक्ति ही सच्चा ज्ञानी व्यक्ति होता है। "सच्चा ज्ञान ज़्यादा बोलने से प्राप्त नहीं होता है और न ही इसके महत्व का वर्णन करना आसान होता, केवल वही व्यक्ति ज्ञान प्राप्त कर सकता है जो ईश्वर की कृपा से कर्म योग के जीवन का अनुकरण करता है।"[15]

सिक्ख धर्म वास्तव में क्रिया प्रधान धर्म है। वह संयासी जीवन को अपनाने के पक्ष में नहीं है। "इसके लिए बंदा बहादुर का उदाहरण दिया गया है, जिसने सामाजिक जीवन का त्याग कर संयासी जीवन को अपनाया। गुरु गोविन्द सिंह उसके पास गये और उसे इस तरह के जीवन की निरर्थकता के बारे में समझाया। उन्होंने उसे अपनी ऊर्जा और शक्ति को इस तरह बर्बाद करने की बजाय उसे मानवता की सेवा के लिए समर्पित करने की सलाह दी। इस तरह वह माधवदास से बंदा बहादुर बन गया। गुरु ने उसे पंजाब जाकर सिक्ख सैनिकों को संगठित करने और उत्पीड़नकारी के विरूद्ध संघर्ष करने की सलाह दी।"[16] गुरु अर्जुन देव के बलिदान के साथ ही सिक्ख गुरुओं की शिक्षा में क्रिया के नए मूल्यों को स्थान दिया गया तथा वीर और साहसी सैनिक तैयार करना, जो अपने समुदाय के सम्मान की रक्षा के लिए अपने जीवन का बलिदान कर सके, उनकी शिक्षा का उद्देश्य बन गया। सिक्ख गुरुओं ने अपने शिष्यों को त्रिरत्न का सिद्धांत दिया। 'नाम जपणा, किरत करनी बंड छकणा' अर्थात् प्रभु नाम स्मरण, हाथ से काम करके जीविकोपार्जन करना तथा ज़रूरतमंद व्यक्तियों में स्वअर्जित पदार्थ बाँटकर खाना, ये सिक्ख जीवन के बहुमूल्य आधारभूत लक्षण हैं, जिन्हें गुरुओं ने अपनी शिक्षा में स्थान दिया।

सिक्ख गुरुओं का मानना है कि जीवन में श्रम का सम्मानजनक स्थान होना चाहिए। स्वयं के हाथों से कार्य करना समाज सेवा का सबसे अच्छा तरीका है। जीवन जीने का सही तरीका वही जानते हैं जो कठिन परिश्रम द्वारा अपनी आजीविका अर्जित करते हैं और उसका 1/10 भाग ज़रूरतमंद की सेवा में लगाते हैं। "गुरु उन धार्मिक संतों की निंदा करता है जो स्वयं को सभ्य बताते हैं लेकिन फिर भी भीख मांगते हैं।"[17]

सिक्ख गुरुओं ने कोरे सिद्धांत ही नहीं दिए हैं, बल्कि इन सिद्धांतों को जीवन में अपनाया भी। उन्होंने सृजनात्मक एवं क्रिया प्रधान जीवन का नेतृत्व किया है। उन्हें श्रम की गरिमा में इतना विश्वास था कि इन गुणों को अपने शिष्यों में स्थापित करने के लिए उन्होंने स्वयं भी श्रमपूर्ण जीवन अपनाया। उनके अनुसार, "ईमानदारीपूर्ण किया गया श्रम व्यक्ति के दिमाग को क्रियाशील बनाता है, उसमें सामाजिक गुणों का विकास करता है, व्यक्ति को आत्मनिर्भर बनाता है और उसे ईश्वर के नजदीक ले जाता है।"[18]

इस प्रकार, गुरु ने शिक्षा को व्यक्ति के ज्ञान और शक्ति का स्रोत माना है जो उसके शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक और आध्यात्मिक विकास द्वारा उसके नैतिक चरित्र का निर्माण करती है। इन्हीं उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए सिक्ख गुरुओं ने शिक्षा के लक्ष्य निर्धारित किए हैं ताकि व्यक्ति को उसके भावी जीवन के लिए तैयार किया जा सके।

टिप्पणी

[1] आहुजा, आर. एल. 1959. *इंडीजीनियस एजुकेशन इन द पंजाब अन्टिल एनेकसैशन विद् स्पेसिफ़िक रेफ़रेंस टू द टाइम्स ऑफ़ सिक्खस* (अप्रकाशित पीएच. डी. थीसिस). पंजाब विश्वविद्यालय, चंडीगढ़. पृ. 185.

[2] आदि ग्रन्थ. महला 1, दखणी ओंकार. पृ. सं. 938.

[3] आदि ग्रन्थ. महला V, राग, आशा. पृ. सं. 412.

[4] सिंह, शेर. 1969. *गुरुनानक — वर्ल्ड टीचर*. इंक्लूडिड इन 'गुरु नानक'. प्रकाशन प्रभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार.

[5] P.154. न्थ, महला 1, जपुजी पृ. सं. 2.

[6] गुरु गोविन्द सिंह, दशम ग्रन्थ (शबद हजारे), पृ. सं. 170.

[7] आदि ग्रन्थ, गुरु अर्जुन देव, सुखमनी, पृ. सं. 272–273.

[8] ____. वही ____. महला 11, राग बसंत, पृ. सं. 1182.

[9] ____. वही ____. महला 11, राग सूही, पृ. सं. 791.

[10] ____. वही ____. महला 1, मारू सो हिला, पृ. सं. 1022.

[11] ____. वही ____. महला 1, दकानी राग, पृ. सं. 0–940.

[12] ____. वही ____. महला 1, वार माझ, पृ. सं. 0–140.

[13] ____. वही ____. महला 1, सिरि राग, पृ. सं. 0–26.

[14] सिंह, हरबंस. 1976. *पर्सपेक्टिव्स ऑन गुरु नानक, (संपादित). पंजाब यूनिवर्सिटी, पटियाला. पृ. सं.* 331.

[15] आदि ग्रन्थ, महला 1, आसा-दी-वार, पृ. सं. 0–465.

[16] नारंग, जी. सी. 1956. *ट्रांसफ़ोर्मेशन ऑफ़ सिक्खइज़्म*. गुजरात आर्ट प्रेस, दिल्ली. पृ. 99–100.

[17] आदि ग्रन्थ, महला 1, श्लोक, पृ. 1245.

[18] ____. वही ____. महला 5, राग गौरी, पृ. सं. 0–422.

संदर्भ

कौर, गुरुविंदर. द *कंसेप्ट ऑफ़ एजुकेशन (विद्या) इन श्री गुरु नानक ग्रंथ साहिब*. *फ्रॉम* http://www.sikhiwiki.org.

खोसला, डी. एन. 1988. द *सिक्ख गुरुज़ ऑन एजुकेशन*. आदि-जुगाड़ प्रकाशन, नयी दिल्ली.

चावला, हरबंस सिंह. 1983. *गुरुबानी विच समकालिक सामाजिक चिंतन*. (पीएच.डी. थीसिस). आधुनिक भाषा विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली.

बेहरा, लखबीर कौर. 2008. *फ़िलोसफ़ी ऑफ़ गुरु ग्रंथ साहिब एंड इट्स एजुकेशनल इम्प्लीकेशंस*. डॉक्टोरल थीसिस. यूनिवर्सिटी ऑफ़ लखनऊ, लखनऊ.

सिंह, जगजीत. 1990. *सरल गुरु ग्रंथ साहिब एवं सिक्ख दर्शन*. विद्या विहार प्रकाशक. दिल्ली.

सिंह, निरभाई. 2003. *सिक्ख डायनामिक विज़न*. हरनाम पब्लिकेशंस, नयी दिल्ली.

सिंह, संतोख. 1983. *फ़िलोसफ़िकल फ़ाउंडेशन ऑफ़ सिक्ख वेल्यू सिस्टम*. मुंशीराम मनोहरलाल पब्लिशर्स, नयी दिल्ली.